आनो भद्रा : क्रतवो यन्तु विश्वतः
मानव जीवन की सर्वतोन्मुखी उन्नति, प्रगति और भारतीय गूढ़ विद्याओं से समन्वित मासिक पत्रिका।

आत्म-प्रकाश

॥ ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः ॥

वर्ष : 02 अंक : 07 अक्टूबर 2012 विक्रम संवत् 2069

आशीर्वाद
प्रेरक संस्थापक
डॉ. नारायणदत्त श्रीमाली
(परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानन्दजी)

सम्पादक
कैलाश चन्द्र श्रीमाली

संयोजक
विनीत श्रीमाली

सह-संयोजक
अरुण मिश्रा, रामप्रताप

प्रकाशक एवं स्वामित्व
कैलाश चन्द्र श्रीमाली
प्राचीन मंत्र-यंत्र विज्ञान

मुद्रक
'सुदर्शन प्रिन्टर्स'
487/505, पीरागढ़ी,
रोहतक रोड, नई दिल्ली-87
से मुद्रित

कार्यालय :
प्राचीन मंत्र-यंत्र विज्ञान
1-सी पंचवटी कॉलोनी,
रातानाडा, जोधपुर
से प्रकाशित

मूल्य भारत में
एक प्रति : 24/-
वार्षिक : 310/-

सम्पादक की कलम से ....

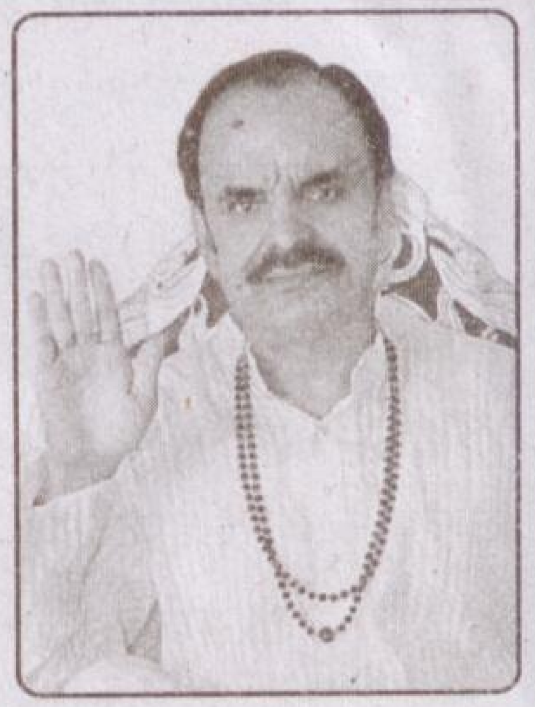

अपनो से अपनी बात

प्रिय आत्मन,

शुभाशीर्वाद!

इस समय आप शक्ति से ओतप्रोत होने हेतु मां दुर्गा से सम्बन्धित साधना और पूजन की तैयारी का चिन्तन कर रहे हैं। जीवन की हर तरह की दुर्गति के विनाश के लिए किसी न किसी शक्ति का अवश्य ही सहारा लेना पड़ता है, जिससे की मल, मूत्र, विष्टा और दुर्गन्ध से युक्त जीवन में सही रूप में सुगन्ध और आनन्द का प्रवाह निरन्तर निरन्तर बहता रहे। इसीलिए हम इन स्थितियों को प्राप्त करने के लिए ईश्वर की आराधना वन्दना, पूजा-अर्चना करते हैं। इस आराधना-वन्दना, पूजा-अर्चना को शास्वत रूप में रक्त के कण-कण में प्रवाहित किया जाता है तो ही हमारी पूजा सही रूप में सफल हो पाती है अन्यथा तो हम जीवन में सैकड़ों-सैकड़ों बार अनेक त्यौहारों व उत्सवों पर पूजा अर्चना करते भी है परन्तु उसका हमें अंश मात्र भी लाभ नहीं मिल पाता क्योंकि ये सब कुछ क्रिया हम होठों के बुदबुदाहट के मात्र से ही सम्पन्न करते हैं और हम जैसे उत्सव की पूर्व स्थिति में थे, वैसी ही स्थिति पूजा-अर्चना मंत्र जाप के बाद भी बनी रहती है। इसका तात्पर्य यह है कि हमने उस शक्ति के भाव चिन्तन को न तो समझा है और न ही उस चिन्तन को रोम-रोम में कोई विशेष प्रयास या क्रिया के द्वारा आत्मसात किया है, क्योंकि हमारे भीतर आत्मीय प्यार या प्रेम का अंकुर नहीं फूटता है। इसलिए जीवन में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आ पाता है।

शास्त्रों में कहा गया है कि क्रोध प्रीति को नष्ट करता है, मान विनय को नष्ट करता है, माया मैत्री को नष्ट करती है, लोभ सब कुछ

नष्ट करता है, जबकि दुनिया के सभी प्राणी प्रेम के भूखे-प्यासे, सभी प्रेम प्रीति चाहते हैं लेकिन बीज क्रोध के बोते हैं। जब कोई बीज क्रोध के या विष के बोयेगा तो प्रेम या अमृत रूपी फल कैसे प्राप्त होंगे। घृणा, क्रोध, द्वेष का नाश होने पर ही प्रेम प्रीति में वृद्धि होती है।

अहंकारी अपनी विनम्रता को नष्ट कर देता है और विनम्रता नष्ट होते ही व्यक्ति के जीवन का विकास रूक जाता है, ज्ञान की, चेतना की, क्षमता समाप्त हो जाती है। अहंकारी तो बहुत बड़ी भ्रांति में जीता है। अहंकारी की भ्रांति यह है कि जैसे मैं केन्द्र हूं सारे परिवार का, समाज का, संसार का, जैसे सब मेरे लिए है और मैं किसी का नहीं सब मेरा साधन हैं और मैं साध्य हूं। इसलिए अहंकारी सोचता है कि मेरे सुख के लिए सभी को दुखी भी होना पड़े तो भी ठीक है क्योंकि वह केवल और केवल स्वहित के बारे में ही निरन्तर निरन्तर विचार और क्रिया करता रहता है। अहंकारी अपने को ही अस्तित्व का केन्द्र मानता है। वह मद में चूर होता है, उसकी आंखों में देखने की क्षमता खो जाती है लेकिन उसके विपरीत विनयवान को शक्ति का बोध होता है। वह कहता है मैं तो कुछ भी नहीं हूं। इस विराट संसार में मेरा क्या अस्तित्व है, मेरा होना तो पानी की लकीर की तरह है। विनयशीलता ही जीवन की पूर्णता का मार्ग है, लघुता से ही प्रभुता और श्रेष्ठता आती है। विनयवान का ही सत्य से, ईश्वर से, गुरु से साक्षात्कार होता है, सत्य अर्थात इष्टमय, ईश्वरमय, गुरुमय बनने की क्रिया।

सांसारिक जीवन में मार्गदर्शन बताने हेतु गुरु मित्र, सखा या सारथी स्वरूप होता है। आप अपने गुरु के सामने बिल्कुल नग्न हो, क्योंकि आप जानते हो कि सही गुरु वहीं है जो जैसे आप है वैसा ही वह स्वीकार करें और जब गुरु हर रूप में आपको स्वीकार करता है तो तभी वह नर से नारायण बनाने की क्रिया प्रारम्भ कर सकता है।

केवल गुरू के सामने ही तो आप अपना कलुष, अपना पाप, अपना अपराध, अपना दुःख, पीड़ा संताप, दीनता सभी कुछ प्रकट कर सकते हैं क्योंकि अपने गुरु पर ही पूरा विश्वास होता है और वह इन विपन्नताओं को समाप्त करने की क्रिया करता है। गुरु की निरन्तर सानिध्यता से जिसने मैत्री सीखी, जिसने प्रेम सीखा, जिसने गुरुमय बनने के लिए माया छोड़ी, जिसने प्रेम के लिए क्रोध छोड़ा, जिसने विनय के लिए मांग छोड़ी और जिसने जीवन को सृजनात्मक गति देने के लिए लोभ से विदा ली, उसी ने ही अपने इष्ट या सद्गुरु को सिद्ध किया। उसी के हृदय में गुरु रूपी परमात्मा का कमल खिलता है, उसी के आंखों में गुरु का वास होता है। तभी वह संतमय देवमय स्थिति को अर्थात् पूर्णता की स्थिति को प्राप्त होता है और संत तो वह है जो सहजता को स्वीकार करता है, सदा प्रसन्न रहता है, प्रकृति के अनुकूल चलता है। जिसमें लघुता, सहजता और सरलता होती है।

इस नवरात्रि की प्रतिपदा से कार्तिक शुक्ल पक्ष लाभ पंचमी के बीच का समय सही अर्थों में जीवन में नवीन संचार और चेतना युक्त बनाने के दिव्यात्मक दिवस हैं और इन दिवसों में शिव, शक्ति, लक्ष्मी और विजय श्री से युक्त होने के लिए विशिष्ट साधना और क्रिया की जाये तो जीवन की दुर्गन्धमय स्थिति से निश्चित रूप से निजात मिलती है। और जीवन को सर्वांगीण रूप से सुगन्धमय और आनन्दमय बनाने हेतु शिव शक्ति लक्ष्मी और विजयश्री से सम्बन्धित विशिष्ट दीक्षाऐं आत्मसात करने से जीवन की उच्चतम स्थितियों को प्राप्त कर सकते हैं।

आपका अपना
कैलाश चन्द्र श्रीमाली